1.1 नदी एवं परिस्थितिकीय तंत्र (River and Ecosystem)

नदी भूतल पर प्रवाहित एक स्वाभाविक रूप से घुमावदार जलधारा होती है। जिसका स्रोत प्रायः हिमनद, झरना, झील या बारिश का पानी होता है, जो उच्च भाग से अधिशेष जल को सागर अथवा झील में गिराती है। नदी शब्द संस्कृत के *नद्यः* से आया है। संस्कृत में इसे *सरिता* भी कहते हैं। (River Wikipedia, 2015) नदी दो प्रकार की होती है सदानीरा तथा बरसाती। सदानीरा नदियों का स्रोत हिमनद, झरना अथवा झील होता है जिसमें वर्ष भर जल भरा रहता है। जबकि बरसाती नदियां बरसात के पानी से निकलती है और उनमें कुछ महीनों तक ही जल का प्रवाह बना रहता है। गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, अमेजन, नील नदी आदि सदानीरा नदियां है। नदी के साथ मनुष्य का गहरा संबंध है। एक नदी सभ्यता को जन्म ही नहीं देती बल्कि उसका लालन-पालन भी करती है इसलिए मनुष्य हमेशा नदी को आदर देता आया है। ऐसा हर उस संसाधन के प्रति है जो मनुष्य को जीवन व्यतीत करने में योगदान देता था।

भू-सतह पर किसी निश्चित मार्ग में प्रवाहित जलराशि को नदी कहते है। वर्षा से प्राप्त जल भूतल पर विविध रूपों में प्रवाहित होता है तो उसे वाही जल (Runoff) कहते है। जब यही जल गुरुत्वाकर्षण (Gravity) के कारण एक निश्चित क्रम के रूप में ऊंचाई से निचाई में बहने लगता है तो नदी का रूप ले लेता है। इसका विकास क्रमिक रूप से होता है। सर्वप्रथम वर्षा जल एक आवरण प्रवाह (Sheet Flow) के रूप में प्रवाहित होता है। आवरण प्रवाह के रूप में प्रवाहित होते हुए शीघ्रता से ढाल का अनुसरण करने लगता है तथा नाली (Rill) के रूप में बहने लगता है। जब नालियाँ परस्पर मिलकर प्रवाहित होती है तो अवनलिका (Gully) बन जाती है। अवनलिकाओं के गहरे होने से नदी का (Rivulet) का निर्माण होता है तथा अंत में अनेक नदिकाओं के मिलने से एक नदी का आविर्भाव होता है। नदी का उद्गम किसी स्रोत (Spring), हिमानी के प्रोथ (Snout of a Glacier), भूसतह पर एकत्रित वर्षा के जल तथा झील आदि से होता है। धरातलीय ढाल (Slope), शैल संरचना (Rock Structure) तथा जलवायु नदियों की प्रकृति एवं प्रकार निर्धारित करती है। (गुर्जर एवं जाट, 2005 पृ. 44)

धरातलीय तल स्रोतो में नदियों का महत्वपूर्ण स्थान है। ये उच्च पर्वतीय क्षेत्रों, हिमाच्छादित चोटियों, झीलों आदि से निकल कर विस्तृत भूभाग में प्रवाहित होती है। स्वतंत्र प्रवाह के अतिरिक्त अनेक स्थानों से अन्तः प्रवाह (Interflow), अंतश्रवण (Percolation) द्वारा प्राप्त जल तथा भूजल झरनों (Spring), प्राकृतिक मृदा

लाइनों तथा निष्पंदन (Seepage) द्वारा नदियों को प्राप्त होता है। इस प्रकार विभिन्न धाराएँ (Streams) परस्पर मिलकर एक नदी का रूप लेतीं है तथा अंत में एक सागर में गिर जाती है। कई नदियां झीलों मे भी गिरती है। नदी मात्र बहते पानी की धारा ही नहीं है। नदी एक प्राकृतिक, सजीव, पर्यावरणीय तंत्र है। जो निरंतर रेत और माटी को अपने साथ बहाती रहती है। जलागम क्षेत्र, बाढ़ क्षेत्र, खादर क्षेत्र, नदी तट और नदी की वनस्पतियाँ आदि सब नदी तंत्र के अभिन्न अंग है। इन सभी प्राकृतिक संरचनाओं को जोड़कर नदी बनती है। एक नदी असंख्य जीव, जन्तुओं और पौधो को आश्रय देती है और उनके साथ पारस्परिक संबंध बनाये रखती है। नदी जैसे-जैसे बहती है कुछ कार्य स्वतःस्फूर्त करती जाती है। नदियों का बहुत बड़ा योगदान धरती पर कलाकारी का है। नदी कही गहरी घाटियां काटती है, कही पत्थरों और चट्टानों को खिसका देती है, पत्थरो को लुढ़का कर बजरी, रेत और मिट्टी में बदल देती है।(Charitable Trust, Peace Institute, 2014)

नदी वैश्विक जल-चक्र की अहम कड़ी है जो अनवरत प्रवाहमान रहते हुए बड़े परिस्थितिकीय तंत्र को जोड़ती एवं पूर्ण करती है। यह एक जटिल प्राकृतिक संरचना है जो सजीव तथा उनके चारों तरफ के परिवेश से निर्मित होती है। परिस्थितिकीय तंत्र में सभी जन्तु अथवा प्राणी समुदाय परस्पर अपने भौतिक वातावरण से ऊर्जा, द्रव्य आदि का आदान-प्रदान करते रहते है। परिस्थितिकीय तंत्र में विभिन्न प्रकार के पदार्थो का एक चक्र चलता रहता है। इनमें नाइट्रोजन-चक्र, जल-चक्र, कार्बन-चक्र,फास्फोरस-चक्र प्रमुख है। (Science Learning, 2015)

नदियां जलीय और तटीय जैव-विविधता की जननी है। यह मानवों, मवेशियों और वन्यजीवों का जल से पोषण करती है। नदी सूक्ष्म जलवायु (Micro Climate) की संरचना करती है। भूजल को बढ़ाती है। प्रदूषण फैलाने वाले तत्वों को बेअसर कर स्वयं को स्वच्छ रखती है। नदियां मनुष्यों के लिए अनेक प्रकार के जीविकोपार्जन के अवसर प्रदान करती है। नदी रेतकणों और माटीकणों को बहती है और माटी की उर्वरा शक्ति को बढ़ाती, उपयोगी पोषक तत्वो को सागर तक पहुंचाती है। सागर के तापमान को नियंत्रित करती है और उसकी लवणता का संतुलन बनाए रखती है साथ ही सागरीय जीवों को जरूरी पोषक उपलब्ध करती है। अतः नदियां जल चक्र को पूर्ण करती रहती है।

प्रसिद्ध समाजशास्त्री सरोकिन के शब्दों में *"नदी जल चक्र का अर्थ ऐसी एहिक दशाओं से है जिनका अस्तित्व मानव के कार्यों से स्वतंत्र है, जो मानव निर्मित नहीं है और जो बिना मानव के अस्तित्व एवं कार्यों से प्रभावित हुये स्वतः रूपांतरित होती है।"* (सिन्हा मेघा, 2007 पृ. 23)

जल चक्र का छाया चित्र

स्रोत: http://indiaenvironmental.blogspot.in/2012/09/water-cycle.html

जल चक्र की वैज्ञानिक अवधारणा के अनुसार जल सागरों, झीलों व थल क्षेत्र से सूर्य के ताप से वाष्प बन कर वातावरण का अंग बन जाता है। ऊपर उठती संचरित होती यह वाष्प ठंडी, संघनित होने लगती है और अनुकूल परिस्थितियाँ बनने पर वृष्टि के रूप में थल व जल दोनों में पुनः गिरती है। वृष्टि के कई रूप हो सकते है जैसे- पानी (Rain), हिम (Ice), उपल (stone), तुहिन (Mist), ओंस (Dew) इत्यादि। थल भाग पर गिरने वाली वर्षा का कुछ भाग भू-रंध्रो से क्षरित, स्रावित होता हुआ सतह के नीचे आरंभिक स्तरों को भिगोता, संतृप्त करता हुआ भू-जलागार में जा मिलता है और फिर भूमि जल के साथ पृथ्वी के भीतर बहता हुआ उपयुक्त स्थलों पर किसी नदी के प्रवाह में मिल जाता है या फिर झरना स्रोत के रूप में फूट निकलता है या सीधे समुद्र में जा मिलता है। नदियां भी समुद्र में जा मिलती है और यह चक्र अनवरत चलता रहता है। जल चक्र की इन मुख्य प्रक्रियाओं (वर्षा, वाष्पीकरण, नदी प्रवाह, भूमि में जल का स्राव और क्षरण) के बीच में ही अनेक उप-प्रक्रियाएं चलती रहती है जैसे हिमनद की गति और उनमें होने वाले समयनुसार परिवर्तन, वर्षा और नदी के जल का थल व थल के अंदर बहाव, थल पर से जल का वाष्पीकरण, बारिस के एक अंश का वनस्पतियों, पेड़-पौधों द्वारा समाहित कर लिया जाना, पत्तियों की सतह से वाष्पोत्सर्जन और जल व थल में जैव-विविधता का विकास आदि। (अस्थाना, 2012 पृ. 60-68)

नदी परिस्थितिकीय तंत्र स्वच्छ जल पारितंत्र का एक उपवर्ग हैं। इसके दो घटक क्रमशःअजैविक व जैविक होते है। अजैविक घटक के रूप में सूर्य ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। इसी स्रोत से ऊर्जा का स्थानांतरण नदी के जीवो व

वनस्पतियों में होता रहता है। विभिन्न खनिज व गैसें जल में घुली रहती है साथ ही नदी के प्रवाहमान जल के अवसाद, धरातलीय भाग के पदार्थ भी नदी जल में मिश्रित होते रहते है। अजैविक घटक इस पारितंत्र का नियमन व नियंत्रण करते रहते है। पारितंत्र के जैविक घटक उत्पादक, उपभोक्ता तथा अपघटक प्राकृतिक नियमों के अनुरूप इसे नियंत्रित एवं नियमित करते है और प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक व आगे की खाद्य प्रणाली का सृजन करते हुये पारितंत्र को आगे बढ़ाते रहते है। (Enchanted Learning.com,2015)

नदी जल परिस्थितिकीय में जैव विविधता का संग्रह पाया जाता है। परिस्थितिकी तंत्र एक समुदाय और इसका भौतिक पर्यावरण होता है जिसे यह एक समय विशेष में ग्रहण करता है। सभी जीव अपने एवं अपने परिस्थितिकी तंत्र के मध्य परस्पर संबंधो में मदद प्राप्त करते है। एक परिस्थितिकीय तंत्र में प्रत्येक प्रजाति कम से कम एक कार्य के लिए अच्छी होती है। इन समस्त कार्यों में से प्रत्येक प्रजातीय सांमजस्य, प्रजातीय विविधता और प्रजातीय स्वास्थ्य को निर्धारित करने वाले तंत्र का महत्वपूर्ण भाग होता है। जैव विविधता में कमी परिस्थितिकी तंत्र को कम टिकाऊ कर देती है। यह अत्यंत उग्र घटनाओं से अधिक असुरक्षित हो जाता है तथा इसके प्राकृतिक चक्र कमजोर पड़ जाते है। (अस्थाना, 2012 पृ. 72-76)

परिस्थितिकीय तंत्र बहुत सी ऐसी सूक्ष्म सेवाएँ भी हमें प्रदान करता है जिन्हे अनुमोदित करना तो दूर, हम उन्हे पहचान भी नहीं पाते है। उदाहरण के लिए जीवाणु एवं मिट्टी के जीव कूड़े-कचड़ें को अपघटित कर उर्वरा भूमि का निर्माण करते है। पौधों में परागण क्रिया के वाहक, जैसे चमगादड़ और मधुमक्खी यह सुनिश्चित करते है कि साल दर साल हमारी फसले अंकुरित हो सकने वाले बीज पैदा करती रहें। अन्य प्राणी, जैसे लेडीबग और मेढ़क फसलों के कीटाणुओं को सीमित रखने में सहायक होते है। इन कार्यो के प्रभाव अत्यंत महत्वपूर्ण होते है जैसे मिट्टी की उर्वरता, कूड़े-कचरे का अपघटन आदि और साथ ही हवा, पानी की शुद्धता, जलवायवीय नियमन एवं बाढ़/सूखा आदि को भी यह कार्य प्रभावित करते है।

जीवों की अनेकानेक किस्मों की दैनिक गतिविधियां परिस्थितिकीय तंत्रो को क्रियाशील रखने में सहायक होती है। इसके अतिरिक्त ये परिस्थितिकी तंत्र जीवन को मदद देते है। एक परिस्थितिकी तंत्र में जितनी अधिक विविधताएं होंगी उतना ही अधिक ये पर्यावरण संबंधन्धी दबाव को सहने में सक्षम होगा। स्वस्थ परिस्थिकीय तंत्र टिकाऊ और किसी बदलाव के प्रति अधिक अनुकूलता रखते है, जैसे कि बाढ़ या सूखा जैसी अत्यंत उग्र घटनाएँ जो पूरे परिस्थितिकीय तंत्र को बदल सकती है। इस प्रकार के तंत्र न सिर्फ अधिक लचीले होते है बल्कि अधिक उत्पादक भी होते है। एक भी प्रजाति की कमी तंत्र की खुद को बरकरार रखने की क्षमता या नुकसान से

उबरने की क्षमता को घटा सकती है। दूसरे शब्दों में, एक परिस्थितिकीय तंत्र में जितना अधिक प्रजातीयता होंगी, उतना ही अधिक यह टिकाऊ होगा।

जैविक स्रोतों की परिस्थितिकीय और आर्थिक दोनों प्रकार की महत्ता है। जैविक रूप से विविधतापूर्ण प्राकृतिक पर्यावरण इंसान के जीने की आवश्यकता की पूर्ति करता है और अर्थव्यवस्था के लिए आधार तैयार करता है। हर चीज को हम खरीदते या बेचते है, जो प्राकृतिक जगत में ही पैदा होती है। जैव विविधता एक अमूल्य स्रोत है जो भोजन, निर्माण, औषधि और यहाँ तक की सौंदर्य प्रसाधनों के भी काम आती है। हमारे जीने के लिए आवश्यक कच्चा माल प्रकृति से ही प्राप्त होता है और यही वैश्विक अर्थव्यवस्था का आधार है।

आज हमें अपने काम आने वाली कई औषधियों के लिए जैव विविधता को धन्यवाद देना चाहिए। आज दवाओं में एक-चौथाई या तो सीधे वनस्पतियों से प्राप्त की जाती है या ये वनस्पतीय तत्वों के रसायनिक रूप से संशोधित संस्करण है। इनमें से आधे से अधिक प्राकृतिक यौगिकों पर आधारित है। कृषि फसल विविधता पर ही निर्भर है। आज भोजन की आपूर्ति फसलों द्वारा किया जा रहा है जो इंसान के खाने में कैलोरी की मात्र की पूर्ति करतें है तथा जैव-विविधता की खाद्य-टोकरी को बनाए रखने में अपना योगदान करते है।

हमारे दैनिक जीवन में प्रयुक्त प्रत्येक वस्तु की जडें प्रकृति की गोद में पाई जा सकती है। जिसमें मनुष्य के भूत, वर्तमान, एवं भविष्य की गतिविधि की कुंजी निहित है। सभी देशी व्यक्तियों, पुरातन धर्मो, कलाकारों, कवियों, संगीतकारों के रचनात्मक कार्यों में प्रकृति ही मूल में रखी गई है। मानवीय सांस्कृतिक ज्ञान, क्रियाकलाप, सृजनात्मकता की अभिव्यक्ति आदि की मूलभूत ताकत प्रकृति से ही प्राप्त की है। सांस्कृतिक विविधता अटूट रूप से जैव विविधता से संबंधित है। यह लगभग निर्विवाद रूप से स्थापित है कि केवल मानव पृथ्वी की एकमात्र प्रजाति के रूप में जीवन नहीं जी सकता और शायद जीना भी नहीं चहिए। क्योकि मानव इस पृथ्वी पर सबसे समझदार प्राणी है, और वह प्राकृतिक संतुलन को भली-भांति समझता है।

1.2 नदी एवं मानव सभ्यता (River and Human Civilization)

नदी व समाज के बीच कई हजार साल पुराना व मजबूत और आत्मीय किस्म का रिश्ता रहा है। जो मानव सभ्यता के विकास से नदी के अटूट संबंध को दर्शाता है। अब तक का इतिहास देखें तो दुनिया की तमाम सभ्यताएं नदियों के किनारे पली-बढ़ी और अतिशयोक्ति नहीं होगी कि नदियों के कारण ही सैकड़ों सालों तक उनका अपना अस्तित्व भी बना रहा। भारत के अलावा संसार के प्राचीन संस्कृति वाले अन्य अनेक देशों में भी मानव सभ्यता का प्रारंभिक विकास नदी घाटियों के क्षेत्र में हुआ। प्राचीन सभ्यताओं की जानकारी नदियों के

नाम से ही हैं: जैसे- नील नदी (मिस्र) की सभ्यता, टिगरिस नदी (मेसोपोटामिया) की सभ्यता, सिंधु घाटी की सभ्यता आदि। मानव समुदाय को जीवन यापन के लिए जल की परम अवश्यकता होती है। यही कारण है कि दुनिया की प्रायः सभी प्राचीन सभ्यताएं नदी तटों के किनारे बसी और विकसित हुई तब भी और आज भी समाज पर यही बात लागू होती है। मनुष्य वही बसे जहाँ उसके लिए बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए जरूरी संसाधन पहले से मौजूद थे। कालांतर में नदियों की धाराएँ बदलती गई और इसके किनारे बसी सभ्यताएं भी उन्ही बदलती धाराओं के साथ ही बदलती रही। यह बात सभ्यताओं के विकास क्रम से भी साबित होती है। पुराने रास्तों को बदलते हुए नदी की धारा जिधर-जिधर मुड़ती है, उधर-उधर वह सभ्यता के नए आयाम भी स्थापित करती चलती है।

मिस्र की सभ्यता (Egypt Civilization)

मिस्र की सभ्यता संसार की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक है। उसका विकास ईसा के जन्म से 3000 वर्ष पहले हो चुका था। मिस्र की सभ्यता को सही अर्थो में सभ्यता कहा जा सकता है क्योंकि इस सभ्यता के उदय काल में मनुष्य जंगली जीवन, घुमक्कड़ी और पशु शिकार पर निर्भरता का परित्याग करके नदी के किनारे स्थायी तौर पर बस गया। वह आजीविका के लिए खेती करने लगा और पशुओं का शिकार करने के साथ ही मांस, दूध, खाल, ऊन और बोझा ढोने के लिए उन्हें पालने लगा। प्रौद्योगिकी के विकास की ओर बढ़ने लगा, जैसे ताँबे के औजार का निर्माण, पानी ऊपर चढ़ाने के लिए ढेंकों का इस्तेमाल और वस्तुकला के क्षेत्र में नए आयामों की स्थापना के साथ एक सुबद्ध समाज के भीतर सामूहिक लक्ष्यों की सिद्धि के लिए सभ्य जीवन व्यतीत करने लगा। (मित्तल,2012 पृ. 1-2)

मिस्र की सभ्यता का जिस प्रदेश में विकास हुआ उसकी सीमाएं वर्तमान मिस्र की भौगोलिक सीमाओं की अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यापक थी। अफ्रीका महाद्वीप के पश्चिमोत्तर में नील नदी के दोनों ओर का समूचा प्रदेश प्राचीन मिस्र सभ्यता के उद्गम और विकास का क्षेत्र था। उसके पूर्व में लाल सागर तथा एक संकरी थल-पट्टी से जुड़ा एशिया का सिनाई प्रांत, पश्चिम में लीबिया का मरुस्थल, उत्तर में भू-मध्य सागर और दक्षिण में ठीक विषुवत रेखा पर हिमाच्छादित चोटियों वाला चाँद का पर्वत (रुवेनजोरी पर्वत) जिससे निकल कर नील नदी उत्तर की ओर बहती हुई भूमध्य सागर में गिरती है। एक प्राचीन मिस्री आप्तवचन में कहा गया है कि " *मिस्र वह भूमि है जिसे नील नदी सींचती है, तथा इसका पानी पीने वाले लोग मिस्री कहलाते है"*।

यूनान के आरंभिक इतिहासकार हेरोडोटस (484 से 422 ईसा पूर्व) ने मिस्र को "नील नदी का प्रसाद (वरदान)" कहा था। यह सही भी है। मिस्र प्रदेश ही नहीं मिस्र की सभ्यता भी नील नदी का प्रसाद है। (मित्तल, 2012 पृ. 2-3)

रुवेनजोरी पर्वत की सबसे ऊंची चोटी 16791 फुट ऊंची है तथा वह बारह मास बर्फ से ढंकी रहती है। विषुवत रेखा वाला वह प्रदेश घोर वर्षा का प्रदेश है। वर्षा तथा पिघले हुए बर्फ का पानी तीन झीलों में भर जाता है जिन्हें आधुनिक काल में विक्टोरिया, अल्बर्ट और एडवर्ट कहा जाता है। ये झीले ही नील नदी का मूल स्रोत है। नील नदी अपने उद्गम से डेल्टा तक 2450 मील लंबे प्रदेश में बहती है, लेकिन उसकी घुमावदार लंबाई कुल 4000 मील बैठती है। यह हमारी धरती की सबसे अधिक लंबी नदी है जो धरती की परिधि के दशवें भाग के बराबर दूरी तय करती है। नील नदी दो चरणों में विभाजित है। उसका पहला चरण श्वेत नील (अल बहर अल आबयाद) कहलाता है और खारतूम में जब उसमें नीली-नील (अल बहर अल अबयाद) का संगम होता है तो उसका दूसरा चरण केवल नील नाम से पुकारा जाता है। नीली-नील की धारा भी इथियोपिया के पहाड़ों से निकलती है और श्वेत-नील के साथ मिलकर मिस्र के हजारों मील रेगिस्तानी इलाके को सींचती हुई भूमध्य सागर में गिरती है। वर्षा के मौसम में भयंकर बाढ़ आ जाया करती थी (क्योंकि प्राचीन काल में नहरों का जाल नहीं बिछाया गया था, ना बांध ही बांधे गए थे) जिसके कारण नदी का पानी चारों ओर फैल जाता और उसके साथ आयी दोमट मिट्टी समूचे क्षेत्र को उपजाऊ बना देती जिसमें अनाज ही नहीं सभ्यता और संस्कृति का विकास भी हुआ। (मिस्र विकिपीडिया, 2015)

शुरू में वर्षा के बाद एक ही फसल होती थी, लेकिन धीरे-धीरे मिस्र के प्राचीन निवासियों ने नदी के किनारे से ढेंगी द्वारा पानी उठाकर और नालियाँ खोदकर सिंचाई शुरू की जिससे अन्य फसलें भी उगने लगी जिससे मिस्र की सभ्यता को उसके समग्र रूप में पहचाना गया। खेती पर निर्भरता ने सिंचाई को अपरिहार्य बना दिया, और उसके लिए घूमने वाले चक्र अथवा पहिये के प्रयोग की कल्पना की गयी। मृतकों के शवों को सुरक्षित रखने के लिए समुचित विज्ञान का विकास किया गया और सूर्य को जीवन दाता के रूप में पहचान कर उसकी उपासना को सभ्यता का अंग बनाया गया। खेती के साथ-साथ मछली पकड़ने के धंधे और मछली के व्यापार को अपनाया गया, राज्य व्यवस्था सुदृढ़ बनायी गयी, कर लगाए गए, कानून बनाए गए और न्याय की स्थापना के लिए अदालतें बनाई गयी। पानी पर यात्रा के लिए नौकाएँ और जहाज बनाए गए, दिशा-सूचक यंत्र तैयार किए गए और विदेशों के साथ व्यापार विकसित किया गया। यह सब कार्य एक लंबे अंतराल में हुआ, लगभग दो

हजार वर्षो के भीतर उसके बाद यह सभ्यता तीन हजार वर्षो तक अपने चरम उत्कर्ष पर थी।(मिस्र विकिपीडिया, 2015)

मिस्र की सभ्यता में स्थापत्य का बहुत मत्वपूर्ण स्थान रहा किन्तु हम यह नहीं भूल सकते कि स्थापत्य के विकास में मिस्र की स्थलाकृति निर्णायक सिद्ध हुई। नील नदी की चिकनी मिट्टी, मिट्टी के वर्तन औरे ईंट बनाने के लिए उपयुक्त थी जिसने मिस्र की सभ्यता को एक विलक्षण आयाम दिया। दूसरी ओर मिस्र की चूने के पत्थर की पहाड़ियों ने पिरामिडों,विशाल मूर्तियों, और भवनों के निर्माण को सुगम बना दिया।

नील नदी को मिस्र की सभ्यता का पालक कहा जाता है क्योंकि इसकी उपजाऊ भूमि ने मिस्र के प्राचीन वासियों को जीवन के साधन दिये और उनके लिए संपत्ति के द्वार भी खोल दिये। नील नदी के मार्ग से मिस्र अपने वैदेशिक व्यापार का विकास किया तथा संसार की अन्य समकालीन सभ्यताओं के साथ संपर्क स्थापित किया।

मेसोपोटामिया की सभ्यता (Mesopotamia Civilization)

दजला (Tigris) फरात (Euphrates) घाटी में ईसा से 5000 वर्ष पहले जिस सभ्यता का विकास हुआ उसे मेसोपोटामिया की सभ्यता कहा जाता है। जल और जीव एक दूसरे के पूरक रहे है। मेसोपोटामिया की सभ्यता भी इसमें अपवाद नहीं थी। यह क्षेत्र इस समय इराक कहलाता है। इस घाटी को यूनानियों ने मेसोपोटामिया की सभ्यता का नाम दिया जिसका अर्थ यूनानी भाषा में दोआब अथवा दो नदियों के बीच का प्रदेश है। यह कांस्ययुगीन सभ्यता का उद्गम स्थल माना जाता है। यहाँ सुमेर, अक्कदी, बेबीलोन तथा असीरिया के साम्राज्य अलग-अलग समय मे स्थापित हुए थे। (मित्तल, 2012 पृ. 46-47)

दजला और फरात नदियों का उद्गम आर्मीनिया के उत्तरी पहाडों से होता है। इन पहाड़ों की दस हजार फुट ऊंची चोटी पर भरपूर वर्षा होती है और उन पर बर्फ जम जाती है, जो दजला और फरात नदियों को वर्ष भर भरपूर जल प्रदान करती है। ये नदियां रेगिस्तानी क्षेत्र में होती हुई फारस की खाड़ी में गिरती है। दजला तो शुरू से ही दक्षिण की ओर बहना शुरू करती है लेकिन फरात का प्रांभिक मार्ग यह संकेत देता है मानो उसका इरादा भू-मध्यसागर पहुँचने का था, लेकिन वह सीरियाई रेगिस्तान में होकर बहने के बजाय उस दिशा को छोड़कर पूर्व की ओर मुड़ जाती है और कुर्दिस्तान की पहाड़ियों के चरणों में बहती हुई अंततः दजला से जा मिलती है। (Mesopotamia Wikipedia, 2015)

पुरातत्वविदों और भूगोलवेत्ताओं का मानना है कि करीब बीस हजार वर्ष पूर्व फारस की खाड़ी का विस्तार गमर्रा तथा हिट तट तक था तथा ये दोनों नदियां दजला और फरात आपस में मिलने के बजाय सीधे क्रमशः गमर्रा और हिट के समीप खाड़ी में गिरती थी। परंतु ये नदियां अपने साथ बहुत सी मिट्टी और कीचड़ लेकर आती थी जो अपने मुहाने पर इकट्ठी करती चली गयी तथा कालांतर में खाड़ी भरती चली गयी और नदियों ने अपनी मृदा से तीन सौ मील लंबा मैदान बना दिया जिसमें कही एक भी पत्थर नहीं थे।

यह एक कांस्ययुगीन सभ्यता थी, जो दलजा व फरात नदियो के किनारे पनपी। इस सभ्यता में *'कानून की संहिता'* (code of system of laws) बनाई गयी थी। कृषि यहाँ का मुख्य पेशा था। *'कुम्हार का चाक'* (potter's wheel) सर्वप्रथम इस सभ्यता में ही बना था। *'क्यूनिफार्म लिपि'* (Cuneiform Script) ईजाद की गई थी। जिसे एक ब्रिटिश अफसर हेनरी रॉलिन्सन ने इसे पढ़ा। *'पाइथोगोरस प्रमेय'* भी इस सभ्यता की देन है। इस सभ्यता के लोगों ने खगोलविद्या से दिन और रात की लम्बाई की गणना की तथा सूर्य और चन्द्रमा के उदय व अस्त होने के समय की गणना की। उन्होंने एक दिन को 24 घण्टों में बाँटा। उन्होंने आकाश को 12 हिस्सों में बाँटा व प्रत्येक को एक नाम दिया। इन्हें *'राशियाँ'* कहा गया उन्होंने चन्द्र कलैण्डर भी बनाया था। (Collage: 2015)

सिंधु घाटी की सभ्यता (Indus Valley Civilization)

सिंधु घाटी (3300-2600 ईसा पूर्व) सभ्यता की खोज का श्रेय 'रायबहादुर दयाराम साहनी' को जाता है। उन्होंने ही पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग के महानिदेशक 'सर जॉन मार्शल' के निर्देशन में 1921 में इस स्थान की खुदाई करवायी। लगभग एक वर्ष बाद 1922 में 'श्री राखल दास बनर्जी' के नेतृत्व में पाकिस्तान के सिंध प्रान्त के 'लरकाना' ज़िले के मोहनजोदाड़ो में स्थित एक बौद्ध स्तूप की खुदाई के समय एक और स्थान का पता चला। इस नवीनतम स्थान के प्रकाश में आने के उपरान्त यह मान लिया गया कि संभवतः यह सभ्यता सिंधु नदी की घाटी तक ही सीमित है, अतः इस सभ्यता का नाम 'सिधु घाटी की सभ्यता' (Indus Valley Civilization) रखा गया। सबसे पहले 1927 में 'हड़प्पा' नामक स्थल पर उत्खनन होने के कारण 'सिन्धु सभ्यता' का नाम 'हड़प्पा सभ्यता' पड़ा। पर कालान्तर में 'पिग्गट' ने हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ों को 'एक विस्तृत साम्राज्य की जुड़वा राजधानियां बतलाया। (Bharatkosh.org, 1994)

अब तक इस सभ्यता के अवशेष पाकिस्तान और भारत के पंजाब, सिंध, बलूचिस्तान, गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, जम्मू-कश्मीर के भागों में पाये जा चुके हैं। इस सभ्यता का फैलाव उत्तर में 'जम्मू' के 'मांदा' से लेकर दक्षिण में नर्मदा के मुहाने 'भगतराव' तक और पश्चिमी में 'मकरान' समुद्र तट पर 'सुत्कागेनडोर' से लेकर पूर्व में पश्चिमी उत्तर प्रदेश में मेरठ तक है। इस सभ्यता का सर्वाधिक पश्चिमी पुरास्थल 'सुत्कागेनडोर', पूर्वी पुरास्थल 'आलमगीर', उत्तरी पुरास्थल 'मांडा' तथा दक्षिणी पुरास्थल 'दायमाबाद' है। लगभग त्रिभुजाकार वाला यह भाग कुल क़रीब 12,99,600 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है। सिन्धु सभ्यता का विस्तार का पूर्व से पश्चिमी तक 1600 किलोमीटर तथा उत्तर से दक्षिण तक 1400 किलोमीटर था। इस प्रकार सिंधु सभ्यता समकालीन मिस्र या 'सुमेरियन सभ्यता' से अधिक विस्तृत क्षेत्र में फैली थी। अब तक भारतीय उपमहाद्वीप में इस सभ्यता के लगभग 1000 स्थानों का पता चला है जिनमें कुछ ही परिपक्व अवस्था में प्राप्त हुए हैं। इन स्थानों में केवल 6 को ही नगर की संज्ञा दी जाती है। ये हैं - हड़प्पा, मोहनजोदडो, चन्हूदड़ों, लोथल, कालीबंगा, हिसार, बणावाली इत्यादि। (भारत का इतिहास, 2009)

हड़प्पा तथा मोहनजोदड़ो में असंख्य देवियों की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। विद्वानों का अनुमान है कि ये मूर्तियाँ मातृदेवी अथवा प्रकृति देवी की हैं। प्राचीन काल से ही मातृ या प्रकृति की पूजा भारतीय करते रहे हैं और आधुनिक काल में भी कर रहे हैं। मातृदेवी की पूजा फ़ारस से लेकर यूनान के निकट इजियन सागर तक के सभी देशों के प्राचीन निवासियों में प्रचलित थी। मातृदेवी की उपासना लोग किस प्रकार करते थे, इसका ज्ञान हमें हड़प्पा से प्राप्त एक मुहर के चित्र से मिलता है। इस मुहर के चित्र में एक नारी बनी हुई है, जिसके पेट से एक पौधा निकलता दिखाया गया है, चाकू लिये हुए एक पुरुष का भी चित्र है और नारी अपने हाथों को ऊपर उठाये हुए है, जिसकी शायद बलि चढ़ाई जाने वाली है। (भारत का इतिहास, 2009)

अभी तक सिन्धु घाटी की खुदाई में कोई मन्दिर या पूजा स्थान नहीं मिला, अत: इस सभ्यता के धार्मिक जीवन का एकमात्र स्रोत यहाँ पाई गई मिट्टी और पत्थर की मूर्तियों तथा मुहरें हैं। इनसे यह ज्ञात होता है कि यहाँ मातृदेवी की, पशुपति शिव की तथा उसके लिंग की पूजा और पीपल, नीम आदि पेड़ों एवं नागादि जीव जंतुओं की उपासना प्रचलित थी। मोहनजोदड़ो तथा हड़प्पा में खड़ी हुई अर्धनग्न नारी की बहुत मृण्मय मूर्तियाँ मिली हैं, इनके शरीर पर छोटा सा लहंगा है, जिसे कटि प्रदेश पर मेखला से बाँधा गया है। गले में हार पड़ा हुआ है तथा मस्तक पर पंखे के आकार की विचित्र शिराभूषा है। इसके दोनों ओर प्याले जैसा पदार्थ है, जिसमें लगे धुएँ के निशान से यह ज्ञात होता है कि इनमें भक्तों द्वारा देवी को प्रसन्न करने के लिए तेल या धूप जलाया जाता था। इस

प्रकार की मूर्तियाँ पश्चिमी एशिया में भी मिली हैं। ये उस समय की मातृदेवी की उपासना की व्यापकता की सूचित करती हैं। आज भी भारत की साधारण जनता में देवी की उपासना बहुत प्रचलित है। इन मूर्तियों के बहुत अधिक मात्रा में पाये जाने से यह कल्पना की गई है कि वर्तमान कुल देवताओं की भाँति प्रत्येक घर में इनकी प्रतिष्ठा और पूजा की जाती थी। पुरुष देवताओं में पशुपति प्रधान प्रतीत होता है। एक मुहर में तीन मुँह वाला एक नग्न व्यक्ति चौकी पर पद्मासन लगाकर बैठा हुआ है। इसके चारों ओर हाथी तथा बैल हैं। चौकी के नीचे हिरण है, उसके सिर पर सींग और विचित्र शिरोभूषा है। इसने हाथों में चूड़ियाँ और गले में हार पहन रखा है। यह मूर्ति शिव के पशुपति रूप की समझी जाती है। पद्मासन में ध्यानावस्थित मुद्रा में इसकी नासाग्र दृष्टि शिव के योगेश्वर या महायोगी रूप को सूचित करती है। तीन अन्य मुहरें पशुपति के इस रूप पर प्रकाश डालती हैं। अनेक विद्वानों ने मोहनजोदड़ो की अति प्रसिद्ध शालधारिणी मूर्ति का भी योग से सम्बन्ध जोड़ा है।(भारत का इतिहास, 2009)

सैन्धव सभ्यता की कला में मुहरों का अपना विशिष्ट स्थान था। अब तक क़रीब 2000 मुहरें प्राप्त की जा चुकी हैं। इसमें लगभग 1200 अकेले मोहनजोदाड़ो से प्राप्त हुई हैं। ये मुहरे बेलनाकार, वर्गाकार, आयताकार एवं वृत्ताकार रूप में मिली हैं। मुहरों का निर्माण अधिकतर सेलखड़ी से हुआ है। इस पकी मिट्टी की मूर्तियों का निर्माण 'चिकोटी पद्धति' से किया गया है। पर कुछ मुहरें 'काचल मिट्टी', गोमेद, चर्ट और मिट्टी की बनी हुई भी प्राप्त हुई हैं। अधिकांश मुहरों पर संक्षिप्त लेख, एक श्रृंगी, सांड, भैंस, बाघ, गैडा, हिरन, बकरी एवं हाथी के चित्र उकेरे गये हैं। इनमें से सर्वाधिक आकृतियाँ एक श्रृंगी, सांड की मिली हैं। लोथल ओर देशलपुर से तांबे की मुहरे मिली हैं।

शंकु तथा बेलन के आकार के पत्थरों से यह ज्ञात होता है कि उस समय शिव की मूर्ति पूजा के अतिरिक्त लिंग पूजा भी प्रचलित थी। मुहरों पर उत्कीर्ण विभिन्न प्रकार के पेड़ों की तथा पशुओं की आकृति से यह ज्ञात होता है कि उस समय पीपल और नीम को पूजा जाता था। पशुओं में हाथी, बैल, बाघ, भैंसे, गैंडे और घड़ियाल के चित्र अधिक मिले हैं। आजकल इनमें से अनेक पशु देवताओं के वाहन रूप में पूजित हैं। यह कहना कठिन है कि उस समय इनकी वाहनों के रूप में प्रतिष्ठा थी या स्वतंत्र रूप में। साँपों को दूध पिलाने तथा पूजा करने का विचार भी इस सभ्यता में था। वीर पुरुषों की पूजा करने का विचार भी सम्भवत: यहाँ था। दो बाघों के साथ लड़ते हुए एक पुरुष की सुमेर के प्रसिद्ध वीर गिलगमेश के साथ तुलना की गई है। सूर्य पूजा तथा स्वास्तिक के भी चिह्न यहाँ पाये गए हैं। उपर्युक्त उपास्य देवताओं के अतिरिक्त इनकी पूजा विधि के सम्बन्ध में भी कुछ मनोरंजक कल्पनाएँ की गई हैं। मिट्टी के एक ताबीज पर एक व्यक्ति को ढोल पीटता हुआ तथा दूसरे व्यक्ति को नाचते हुए दिखाया

गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान काल की भाँति उस समय संगीत और नृत्य पूजा के अंग थे। मोहनजोदड़ो की नर्तकी की प्रसिद्ध काँस्य मूर्ति सम्भवत: उस समय देवता के सम्मुख नाचने वाली किसी देवदासी की प्रतिमा है। (भारत का इतिहास, 2009)

सिंधु घाटी सभ्यता के पतन का मुख्य कारण जलवायु परिवर्तन था। *प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी आफ साइंसेज पत्रिका* में प्रकाशित शोध में यह निष्कर्ष दिया गया। अमेरिका के वुड्स होल ओसियनोग्राफिक इंस्टीट्यूट के भूवैज्ञानिकों की टीम ने उपग्रह से प्राप्त तस्वीरों, स्थलाकृतिक आंकड़ों का उपयोग और सिंधु घाटी तथा उसके आस पास बहने वाली नदियों के प्रभाव क्षेत्र के डिजिटल मानचित्रों का विश्लेषण को शोध का आधार बनाया। प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी आफ साइंसेज पत्रिका में प्रकाशित शोध में बताया गया कि मानसून बारिश में आई कमी, सिंधु घाटी में बहने वाली नदी के प्रवाह को कमजोर करने का कारण बनी जिससे सिंधु घाटी सभ्यता का पतन हुआ, क्योंकि हड़प्पा संस्कृति अपने कृषि कार्यों के लिए पूरी तरह से नदी के प्रवाह पर निर्भर थी। अमेरिका के वुड्स होल ओसियनोग्राफिक इंस्टीट्यूट के भूविज्ञानी और इस शोध के प्रमुख लिविउ जियोसन के अनुसार 5200 वर्ष पहले सिंधु घाटी सभ्यता विकसित हुई, इसके शहर बने और 3900 से 3000 वर्ष पहले धीरे-धीरे उनका पतन हो गया सिंधु घाटी सभ्यता के विकास और इसके पतन में दोनों में ही नदी की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी। (Jagaranjosh: 30 May 2012)

गंगा घाटी की सभ्यता (Ganga Valley Civilization)

भारत की सबसे महत्त्वपूर्ण नदी गंगा, उत्तर भारत के मैदानों की विशाल नदी है। गंगा भारत और बांग्लादेश में मिलकर 2,510 किलोमीटर की दूरी तय करती हुई उतराखंड में हिमालय से निकलकर बंगाल की खाड़ी में भारत के लगभग एक-चौथाई भू-क्षेत्र को अपवाहित करती है तथा अपने बेसिन में बसे विराट जनसमुदाय के जीवन का आधार बनती है। जिस गंगा के मैदान से होकर यह प्रवाहित होती है, वह इस क्षेत्र का हृदय स्थल है, जिसे हिन्दुस्तान कहते हैं। गंगा नदी को *उत्तर भारत की अर्थव्यवस्था का मेरुदण्ड* भी कहा गया है। यहाँ तीसरी सदी में अशोक महान के साम्राज्य से लेकर 16वीं सदी में स्थापित मुग़ल साम्राज्य तक सारी सभ्यताएँ विकसित हुईं। गंगा नदी अपना अधिकांश सफ़र भारतीय इलाक़े में ही तय करती है, लेकिन उसके विशाल डेल्टा क्षेत्र का अधिकांश हिस्सा बांग्लादेश में है। गंगा के प्रवाह की सामान्यत: दिशा उत्तर-पश्चिमोत्तर से दक्षिण-पूर्व की तरफ है और डेल्टा क्षेत्र में प्रवाह आमतौर से दक्षिण मुखी है। भारतीय भाषाओं में तथा अधिकृत रूप से गंगा नदी को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इसके अंग्रेज़ीकृत नाम 'द गैंगीज़' से ही जाना जाता है। गंगा सहस्राब्दियों से हिन्दुओं की

पवित्र तथा पूजनीय नदी रही है। अपने अधिकांश मार्ग में गंगा एक चौड़ी व मंद धारा है और विश्व के सबसे ज़्यादा उपजाऊ और घनी आबादी वाले इलाक़ों से होकर बहती है। इतने महत्व के बावज़ूद इसकी लम्बाई 2,510 किलोमीटर है, जो एशिया या विश्व स्तर की तुलना में कोई बहुत ज़्यादा नहीं है। भारत की पावन नदी, जिसकी जलधारा में स्नान से लोगों की धारणा है कि पापमुक्ति और जलपान से शुद्धि होती है। यह प्रसिद्ध नदी, हिमाचल प्रदेश में गंगोत्री से निकलकर मध्यदेश से होती हुई पश्चिम बंगाल के परे गंगासागर में मिलती है। गंगा की घाटी संसार की उर्वरतम घाटियों में से एक है और सरयू, यमुना, सोन आदि अनेक नदियाँ उससे आ मिलती हैं। उसकी घाटी भारतीय सभ्यता के विकास में अग्रणी रही हैं। गंगा को भारतीय संस्कृति में विशिष्ट योगदान के कारण ही उसे असाधारण महिमा मिली है, जिससे वह '*पतितपावनी*' कहलाती है। (Ganga Bharatkosh.org,1994)

ऐतिहासिक रूप से गंगा के मैदान से ही हिन्दुस्तान का हृदय स्थल निर्मित है और वही बाद में आने वाली विभिन्न सभ्यताओं का पालना बना। अशोक के ई. पू. के साम्राज्य का केन्द्र पाटलिपुत्र (पटना), बिहार में गंगा के तट पर बसा हुआ था। महान मुग़ल साम्राज्य के केन्द्र दिल्ली और आगरा भी गंगा के बेसिन की पश्चिमी सीमाओं पर स्थित थे। सातवीं सदी के मध्य में कानपुर के उत्तर में गंगा तट पर स्थित कन्नौज, जिसमें अधिकांश उत्तरी भारत आता था, हर्ष के सामन्तकालीन साम्राज्य का केन्द्र था। मुस्लिम काल के दौरान, यानी 12वीं सदी से मुसलमानों का शासन न केवल मैदान, बल्कि बंगाल तक फैला हुआ था। डेल्टा क्षेत्र के ढाका और मुर्शिदाबाद मुस्लिम सत्ता के केन्द्र थे। अंग्रेज़ों ने 17वीं सदी के उत्तरार्द्ध में हुगली के तट पर कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) की स्थापना करने के बाद धीरे-धीरे अपने पैर गंगा की घाटी में फैलाए और 19वीं सदी के मध्य में दिल्ली तक जा पहुँचे। (गंगा भारत का इतिहास,2009)

गंगा की इस घाटी में एक ऐसी सभ्यता का उद्भव और विकास हुआ जिसका प्राचीन इतिहास अत्यन्त गौरवमयी और वैभवशाली है। जहाँ ज्ञान, धर्म, अध्यात्म व सभ्यता-संस्कृति की ऐसी किरण प्रस्फुटित हुई जिससे न केवल भारत बल्कि समस्त संसार आलोकित हुआ। पाषाण या प्रस्तर युग का जन्म और विकास यहाँ होने के अनेक साक्ष्य मिले हैं। इसी घाटी में रामायण और महाभारत कालीन युग का उद्भव और विलय हुआ। शतपथ ब्राह्मण, पंचविंश ब्राह्मण, गोपथ ब्राह्मण, ऐतरेय आरण्यक, कौशितकी आरण्यक, सांख्यायन आरण्यक, वाजसनेयी संहिता और महाभारत इत्यादि में वर्णित घटनाओं से उत्तर वैदिककालीन गंगा घाटी की जानकारी मिलती है। प्राचीन मगध महाजनपद का उद्भव गंगा घाटी में ही हुआ जहाँ से गणराज्यों की परंपरा विश्व में पहली बार प्रारंभ

हुई। यहीं भारत का वह स्वर्ण युग विकसित हुआ जब मौर्य और गुप्त वंशीय राजाओं ने यहाँ शासन किया। (गंगा विकिपेडिया, 2015)

गंगा तट पर होने वाली साधना और उससे निकलने वाले संघर्षों ने अभी तक भारत की सांस्कृतिक अस्मिता को बचाए रखा है। संभवतः इसीलिए कहा जाता है कि गंगा के बिना भारतीय संस्कृति की कल्पना भी नहीं की जा सकती। ऐसी मान्यता है कि गंगा के दर्शन मात्र से ही मुक्ति हो जाती है – गंगे तव दर्शनार्थ मुक्ति दुनिया में कई ऐसी नदियां है जिनको किसी देश अथवा क्षेत्र विशेष की जीवनरेखा माना जाता है। (Headline Express, 2015)

गंगा का आरम्भ अलकनन्दा व भागीरथी नदियों से होता है। गंगा की प्रधान शाखा भागीरथी है जो हिमालय के गोमुख नामक स्थान पर गंगोत्री हिमनद से निकलती है। यहाँ गंगा जी को समर्पित एक मंदिर भी है। गोमुख, गंगोत्री शहर से 19 कि.मी. उत्तर में है। भागीरथी व अलकनन्दा देव प्रयाग में संगम करती है जिसके पश्चात वह गंगा के रुप में पहचानी जाती है। इस प्रकार 200 कि.मी. का संकरा पहाड़ी रास्ता तय करके गंगा नदी ऋषिकेश होते हुए प्रथम बार मैदानों का स्पर्श हरिद्वार में करती है। हरिद्वार गंगा जी के अवतरण का पहला मैदानी तीर्थ स्थल है। वैदिक काल से हरिद्वार की महत्ता बनी हुई है। देवगण और मनुष्य गण अपने सांसारिक नियमों की शुद्धि के लिए तथा पितरों के तर्पण श्राद्ध के लिए हरिद्वार के हरि की पैडी घाट पर स्नान दान का पुण्य प्राप्त करके मोक्ष की कामना करते आए हैं। हरिद्वार का गंगा जल समस्त भारत के गंगा जल से शुद्ध और पवित्र माना गया है। हरिद्वार के बाद गंगा उत्तरी भारत के मैदानी इलाकों में पहुंचती है। गंगा किनारे बसा हुआ गढ़मुक्तेश्वर भी पवित्र तीर्थ स्थल है। गढ़ मुक्तेश्वर का जिक्र भगवत पुराण और महाभारत में किया गया है। यह जगह हस्तिनापुर राज्य में आती थी और पांडवों ने यहां एक किला भी बनवाया था। इस जगह का नाम मुक्तेश्वर महादेव के मंदिर के नाम पर रखा गया है। यहां स्थित चार मंदिरों में मां गंगा की पूजा होती है। गढ़ मुक्तेश्वर के बाद गंगा कन्नौज पहुंचती है। चंद्रगुप्त द्वितीय के समय में चीनी यात्री फाहयान और राजा हर्षवर्धन के समय में ह्वेनसॉन्ग कन्नौज आए थे। कन्नौज से गंगा कानपुर पहुंचती है। माना जाता है कि भगवान राम के सीता को वनवास पर भेजने के बाद वह यहां स्थित महर्षि वाल्मीकि के आश्रम में आकर रही थीं। यहीं उन्होंने लव और कुश को जन्म दिया और बाद में धरती में समा गईं। (गंगा विकिपीडिया, 2015) गंगा किनारे बसे इस शहर के निवासी हर साल होली के बाद गंगा मेला भी मनाते हैं, जो यहां का खास मेला है। कानपुर के बाद गंगा संगम के शहर इलाहाबाद पहुंचती है।

इलाहाबाद या तीर्थराज प्रयाग पवित्र तीर्थ स्थल है। यहां गंगा नदी में यमुना आकर मिलती है। प्राचीन समय में यहां सरस्वती भी इन दोनों नदियों में मिलती थी, लेकिन अब वह लुप्त हो गई है। प्रयाग में कुंभ के अवसर पर दूर-दूर से श्रद्धालु स्नान करने के लिए आते हैं। माना जाता है कि इसी शहर में भगवान ब्रह्मा ने वेदों की रचना की थी। संगम के निकट स्थित लेटे हुए हनुमान जी का मंदिर अपनी तरह का अनोखा मंदिर है। प्रयाग से गंगा धार्मिक महत्व रखने वाले शहर वाराणसी या काशी या बनारस पहुंचती है। काशी विश्व के सबसे प्राचीन शहरों में से एक है। इसे भारत की धार्मिक राजधानी भी कहा जाता है। माना जाता है कि इस शहर की स्थापना भगवान शिव ने की थी। ऐसे में इसका जिक्र तमाम धार्मिक ग्रंथों में मिलता है। काशी विश्वनाथ का मंदिर पूरे देश में प्रसिद्ध है, जो देश भर में मौजूद बारह ज्योतिर्लिंगों में से एक है। इसके दर्शन करने के लिए दूर-दूर से श्रद्धालु आते हैं। इसके अलावा, यहां के दशावमेध घाट और मणिकर्णिका घाट भी काफी प्रसिद्ध हैं। मोक्षदायिनी नगरी काशी में गंगा एक वक्र लेती है, जिससे यह यहाँ उत्तरवाहिनी कहलाती है। काशी में ही असि व वरुना नदियों का मिलन गंगा में होता है, जहां के बीच के भाग को वाराणसी कहा जाता है।

वाराणसी से मिर्जापुर, पाटलिपुत्र, भागलपुर होते हुए गंगा पाकुर पहुँचती है। भागलपुर में राजमहल की पहाड़ियों से यह दक्षिणवर्ती होती है। पश्चिम बंगाल के मुर्शिदाबाद जिले के गिरिया स्थान के पास गंगा नदी दो शाखाओं में विभाजित हो जाती है-भागीरथी और पद्मा। भागीरथी नदी गिरिया से दक्षिण की ओर बहने लगती है जबकि पद्मा नदी दक्षिण-पूर्व की ओर बहती फरक्का बैराज से छनते हुई बांग्लादेश में प्रवेश करती है। यहाँ से गंगा का डेल्टाई भाग शुरू हो जाता है। मुर्शिदाबाद शहर से हुगली शहर तक गंगा का नाम भागीरथी नदी तथा हुगली शहर से मुहाने तक गंगा का नाम हुगली नदी है। इस प्रकार गंगा नदी आज भी अपने सभ्यता व संस्कृति को समेटे हुए इन क्षेत्रों को सींच रही है । नदी तट के शहर इस नदी की सभ्यता को आज भी अपने साथ आगे बढ़ा रहे है और ये सभ्यता चल रही है।

1.3 नदी एवं मानव जीवन (River and Human Life)

नदी की प्रकृति है उसका प्रवाह। निरंतर बहते रहना ही नदी में जीवन का संचार करता है। नदी का अस्तित्व इस प्रवाह से ही है। विभिन्न इलाको व वहाँ के नदी तट पर बसे लोगो की पहचान उन नदियों के नाम से हुई। नदी के बहते जल से नदी के आस-पास बसने वाले लोगो, राहगीरों व जीव-जन्तुओं ने सदा अपनी प्यास बुझाई। नदी के जल ने किसानों के खेत सींचे। नदी की बहती धारा के साथ लोगों दूर-दूर की यात्राएं करते रहे है तथा नदी

मछुआरों की आजीविका सुनिश्चित करती रही है और प्रवासी पक्षियों को भी उनका भोजन उपलब्ध कराती रही है।

नदी किनारे के बालू पत्थर से नदी किनारे बसे लोग अपने घर बनाते रहे हैं। नदी तटों पर प्राय: स्थानीय सामुदायिक जीवन और पर्यटन की चहल पहल से रौनक रहती है। मानव नदी के असंख्य उपकारों के आगे नतमस्तक हुआ है। वह नदी पर श्रद्धा रखता है। मानव मन ने नदी के साथ रिश्ता जोड़ा है। नदी को माँ की संज्ञा दी है। जैसे माँ बिल्कुल निस्वार्थ भाव से अपने सभी बच्चों को समान रूप से पालती एवं पोषती है उनकी कई जरूरतें पूरी करती है। वैसी ही भूमिका में नदी सभी जीवों के साथ समान रूप से निभाती आई है। नदी को माँ या देवी के रूप में पूजा जाता है। विभिन्न धर्मों में नदी पूजा-अर्चन की विधि है, जिसमें नदी संरक्षण की प्रेरणा दी गयी है। कई धार्मिक कथा-कहानियां, कर्म कांड नदी से जुड़ें रहे है। कई नदी तटों, विशेषकर संगम स्थलों का विकास प्रसिद्ध तीर्थ स्थानों के रूप में हुआ है। हर नदी वहां के स्थानीय लोगों के लिए पवित्र है और उनकी संस्कृति से अभिन्न रूप से जुड़ी हैं। वस्तुतःनदी प्रवाहमान संस्कृति की पहचान है। नदियों का संगम मानो संदेश देता है कि विभिन्न संस्कृतियों को भी परस्पर घुलना-मिलना चाहिए। उसी प्रकार विभिन्न धर्म, सम्प्रदाय के लोग नदी तट पर आपसी भाईचारा, प्रेम, सदभाव से मिलजुल कर अपनी संस्कृति में विविधता में एकता का संदेश देते है।

इस प्रकार हम देख सकते है कि नदी व मानव का सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक व पर्यावरणीय सम्बन्धों का अटूट जाल है, जिसमें नदी पर मनुष्य की निर्भरता, मनुष्य का विकास, मनुष्य की सभ्यता निर्भर ही नहीं है वरन नदी के साथ-साथ प्रवाहमान गति से चलती भी रहती है। भारत में प्रकृति ने नदियों का जाल बिछा रखा है जो मनुष्य को वर्ष पर्यन्त प्रवाहमान बनाए रखा है।

1.4 नदियों की वर्तमान स्थिति (Current Situation of Rivers)

प्रकृति ने मानव के अस्तित्व को सतत बनाये रखने के लिये नदी जल, जंगल, मृदा आदि अनेक प्रकार के प्राकृतिक संसाधनों को जन्म दिया। इनमें प्रमुख हैं नदियां। नदियां सदियों से मानव सभ्यता और संस्कृति की साक्षी हैं। सभ्यता और संस्कृति के सदियों प्राचीन इतिहास की साक्षी नदियों ने कई सभ्यता और संस्कृति के सृजन और विध्वंस को अत्यंत करीब से देखा, जिसे मानव ने माँ, माई, मैया के रूप में पूजा, जो संसार में एक विशिष्ट भाव है। इस भाव में नदियों के संरक्षण और प्रबन्धन की भावनाएं अन्तर्निहित हैं परन्तु अब मानव के जीवन की भागमभाग और अपने अस्तित्व को प्रदर्शित करने के लिये, प्राकृतिक संसाधनों को संजोने एवं उनके

संरक्षण के नजरिये में परिवर्तन आया है और जिसके कारण उनके उपभोग का मानस ही रह गया है। आज नदियों का जल आय-व्यय का साधन बन गया जिसे मनुष्य वस्तु के रूप में अपने निहित स्वार्थ के कारण नदी के स्वास्थ्य को धीरे-धीरे क्षीण करता जा रहा है लेकिन वह यह नहीं जानता कि वह अपने अस्तित्व को भी चुनौती दे रहा है।

विकास कोई आज की धारणा नहीं है। प्राचीन समय से मनुष्य पर्यावरण के साथ समायोजन करते हुए विकास की ओर अग्रसर रहा किन्तु इसकी प्रक्रिया आज इतनी तीव्र है मनुष्य ने नदी को क्या बना कर रख दिया है। प्रारम्भिक विकास के सोपानों को पार करने में उसे लाखों वर्ष लगे किन्तु आधुनिक युग में उसकी गति (औद्योगीकरण, नगरीकरण, भूमंडलीकरण) ने जो तेजी पकड़ी है, वह आश्चर्य में डाल देती है उसमें मनुष्य का चेहरा और उसका परिवेश कुछ इस तरह बदल दिया है कि रूपान्तरण की प्रक्रिया कुछ सहज नहीं प्रतीत होती। पहले विकास पर्यावरण पर निर्भर था और प्राकृतिक संसाधन, जीव-जन्तु की अवस्थाओं में ढल कर होता था। प्रकृति का एक पूरा तंत्र है जिसके साथ स्थल, जल, वायु और जीव की एक पूरी व्यवस्था जुड़ी है। यह एक परिवार की भाँति एक दूसरे के सहयोगी है। एक के बिना दूसरे की कल्पना नहीं की जा सकती। लेकिन आज मनुष्य ने तकनीकी शक्ति, प्रौद्योगिकी, आधुनिक विज्ञान को अपने विकास क्षेत्र में प्रमुखता दे रहा है जहां केवल उपभोक्तावाद को बढ़ावा मिल रहा है और मनुष्य अपने प्राकृतिक परिवेश से दूर होता जा रहा है। (चातक गोविंद, 2006 पृ. 98-111)

मानव विकास का सीधा संबंध नगरीकरण, औद्योगीकरण, विद्युत परियोजनाओं, खनन, परिवहन, ऊर्जा संसाधन आदि कई क्रिया-कलापों से है। नगरीकरण सभ्यता के विकास का ही एक चरण है जो मानव को सुख सुविधा जुटाने में बड़ा योगदान करता है। आधुनिक समय में नदियों के तटों पर आधुनिक शहरों का बड़ी तेजी से विस्तार हुआ है। जिस नदी तट पर शहर नहीं भी थे वह आज शहर कुकुरमुत्तों की तरह उग आए है। जब कही नया नगर उठ खड़ा होता है तो वहाँ पर्यावरण संबंधी सैकड़ों समस्याएँ आ खड़ी होती है। नगर बसता है तो जनसंख्या का विकेन्द्रीकरण होता है और उसके लिए मकान, दुकान, शौचालय, नालियाँ, जल, दफ्तर, फैक्ट्री आदि कई चीजों की अवश्यकता होती है। फलतः एक पूरी व्यवस्था अपेक्षित होती है जिससे कि शहर को साफ-सुथरा रखा जा सके और अन्य अवश्यकताओं की पूर्ति की जा सके। जिसका उदाहरण हम अपने शहरों में भी देख सकते है। जहां नदियों का पानी टैंकरों, पाइप लाइनों से पीने के लिए घरों में आता है और नालियों से सीवेज में जाता है। सीवेज का गंदा पानी पुनः नदियों में गिरा दिया जाता है। साथ ही नदी तटों पर बसे शहर धरती के पेट में असंख्य छेद कर भूगर्भीय जल को खीच कर प्यास बुझा रहे है और उसी जल का व्यापार भी

कर रहे है। कुछ शहरों में बड़े-बड़े पाइप लाइन से नदियों का पानी पीने के लिए दूर भेजा जाता है जहाँ नदियां नहीं है। ये हमारा आज का आधुनिक साफ-सुथरा शहर है जो प्राकृतिक संसाधनों का हरण तो कर रहा है साथ ही आधुनिक मानव के मस्तिष्क का भी हरण कर इस प्रक्रिया को बढ़ाने में मददगार साबित हो रहा है। (सिंह शिवबहाल, 2014 पृ. 30-31)

पानी हमारे सांस्कृतिक जीवन का एक आधारभूत तत्व है। 'रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सून'। ये सूक्ति मनुष्य को सचेत करती है और पानी के महत्व को रेखांकित भी करती है। जल जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संसाधन है जो मनुष्य को पीने के लिए ही नहीं बल्कि खाना पकाने, धुलाई, सिंचाई, जलीय जीवजंतु के जीवन आदि के लिए महत्वपूर्ण है। लेकिन आज उद्योगों का अवशिष्ट, कचरा, सीवेज का गंदा नाला, इस्तेमाल की गयी वस्तुओं के अवशेष आदि को लोग नदियों में फेक रहे है, परिणाम स्वरूप आज जीवन का आधार नदियां गंदगी ढोने वाली मालगाड़ी बन कर रह गई है। कारखानों द्वारा छोड़े गए विषैले रसायनों, कृषि में प्रयुक्त कीटनाशकों से नदी का जल प्रदूषित होता है जो मनुष्यों, मछलियों, जीवजंतुओ,पशुओं के लिए गंभीर खतरा बना हुआ है। आज देश की कई नदियां घटिया जल आपूर्ति नीति, निम्न जल शोधन प्रणाली तथा समुचित अपशिष्ट प्रबंधन प्रणाली के अभाव के कारण नदी जल के प्रदूषण का गंभीर सामना कर रही है, जो उनकी स्वयं की निर्मित प्रणाली का परिणाम है।

काशी हिंदू विश्वविद्यालय के नदी वैज्ञानिक प्रो. यू.के. चौधरी का मानना है कि *"नदियाँ हमारी जीवन रेखा हैं। इन्हें हर कीमत पर बचाया जाना चाहिए। नदी का सीधा संबंध पानी, मिट्टी एवं वायु से होता है। अगर इन नदियों का अस्तित्व समाप्त हो गया तो नदियों के हरे-भरे क्षेत्र को रेगिस्तान में बदलते देर नहीं लगेगी। न केवल पीने के पानी बल्कि खेती के लिए गंभीर समस्या पैदा हो जाएगी। वैज्ञानिकों का मानना है कि नदी के किनारे खेती होनी चाहिए। अगर उनके दोनों किनारों पर कब्जा करके अट्टालिकाएँ खड़ी की जाती रही, जैसा वर्तमान नदियों के तटों पर हो रहा है, तो नदियों की सांसें थम जाएँगी और हमारी जीवनदायिनी नदियाँ इतिहास के पन्नों तक सीमित रह जाएँगी"*। (पाठक, 2015)

काशी हिंदू विश्वविद्यालय के पर्यावरणविद प्रो. बी डी. त्रिपाठी का मानना है कि *"नदियों का पर्यावरण संतुलन दिनोदिन बिगड़ रहा है जो मानव जीवन के लिए खतरे का संकेत है। नदियों का सीधा संबंध वायुमंडल से होता है। अत्यधिक जलदोहन एवं मल जल की मात्रा बढ़ने से नदियों के जल-में लेड, क्रोमियम, निकेल, जस्ता आदि धातुओं की मात्रा बढ़ती जाती है जो मानव जीवन के लिए खतरे की घंटी है"*। (पाठक, 2015)

आज भारत की पवित्र नदियों में सरस्वती जहां एक ओर अपना अस्तित्व खो चुकी हैं, वहीं गंगा, यमुना और ब्रह्मपुत्र अपने अस्तित्व के लिये संघर्षरत हैं। मानव नदियों के उपभोग के लिये तो सदैव तत्पर है लेकिन उसके जल के लेखा जोखा, उसके स्वास्थ्य, संरक्षण, प्रबन्धन और गुणवत्ता व मात्रा के बारे में तनिक भी विचार न के बराबर कर रहा है। अब जरा एक नजर नदियों की स्थिति पर भी डाल लेते हैं ताकि हम अपनी जिम्मेदारी को ठीक से समझ लें और उसे अधिक वक्त के लिए टालें नहीं बल्कि तत्काल नदी संरक्षण में अपनी भूमिका तलाश लें। नदियां हमें जीवन देती हैं लेकिन विडम्बना देखिए कि हम उन्हें नाला बना दे रहे हैं। पवित्र मानी जाने वाली गंगा भी इससे अछूती नहीं है। पवित्र गंगा का आंचल उसके स्वार्थी पुत्रों ने कुछ जगहों पर इतना मैला कर दिया है कि उसके वजूद पर ही संकट खड़ा हो गया है। धार्मिक क्रियाकलापों से गंगा उतनी दूषित नहीं हो रही जितनी कि तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या, जीवन के निरंतर ऊंचे होते हुए मानकों, औद्योगीकरण और शहरीकरण के हुए अत्यधिक विकास के कारण मैली हो रही है। गंगा सहित अन्य नदियों के प्रदूषित होने का सबसे बड़ा कारण सीवेज है। बड़े पैमाने पर शहरों से निकलने वाला मलजल नदियों में मिलाया जा रहा है जबकि उसके शोधन के पर्याप्त इंतजाम ही नहीं हैं। जिसके परिणाम स्वरूप नदी जैव विविधता व परिस्थितिकीय तंत्र को भी खतरा उत्पन्न हो गया है। यही हाल रहा तो मनुष्य की आगे आने वाली पीढ़ी को भयंकर कठिनाई होगी।

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने अपने अध्ययन में कहा है कि देशभर के 900 से अधिक शहरों और कस्बों का 70 फीसदी गंदा पानी पेयजल की प्रमुख स्रोत नदियों में बिना शोधन के ही छोड़ दिया जाता है। कारखाने और चीनी मिले भी नदियों को प्रदूषित कर रहे हैं। हमने जीवनदायिनी नदियों को मल-मूत्र का अड्डा बनाकर रख दिया है। नदियों में सीवेज छोड़ने की गंभीर भूल के कारण ग्वालियर की दो नदियां स्वर्णरेखा नदी और मुरार नदी आज नाला बन गई हैं। इंदौर की खान नदी भी गंदे नाले में तब्दील हो गई है। कभी इन नदियों में पितृतर्पण, स्नान और अठखेलियां करने वाले लोग अब उनके नजदीक से गुजरने पर नाक मुंह सिकोड़ लेते हैं। यह स्थिति देश की और भी कई नदियों के साथ हुई है। देश की 70 फीसदी नदियां प्रदूषित हैं और मरने के कगार पर हैं। इनमें गुजरात की अमलाखेड़ी, साबरमती और खारी, आंध्रप्रदेश की मुंसी, दिल्ली में यमुना, महाराष्ट्र की भीमा, हरियाणा की मारकंडा, उत्तरप्रदेश की काली,असि और हिंडन नदी सबसे ज्यादा प्रदूषित हैं। गंगा, नर्मदा, ताप्ती, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी, महानदी, ब्रह्मपुत्र, सतलुज, रावी सभी बदहाल स्थिति में हैं। (CENTRAL POLLUTION CONTROL BOARD, 2015)

राष्ट्रीय जल प्रवाह पद्धति में प्रदूषण खतरे के निशान के ऊपर पहुंच गया है। राष्ट्रीय परिवेश अभियांत्रिकी शोध संस्थान के वैज्ञानिकों (नीरी) द्वारा शोध सर्वेक्षण से पता चलता है कि देश का लगभग 70% भूगर्भीय जल

मानवीय उपयोग के लिए अनुपयुक्त हो चुका है। एक सर्वेक्षण के अनुसार मुंबई महानगर के उपनगर अम्बरनाथ और उल्हास नगर के बीचों-बीच से होकर जो कालू नदी बहती है उसमें भारी धातुओं का जमाव पाया गया है। इस नदी के किनारे पाए जाने वाले पायक्रस पौधे की पत्तियों में पारा मिला हुआ है। जो दुधारू जानवर इसका सेवन करते हैं उनके दूध में पारा मिला हुआ पाया गया और यही दूध जब बच्चे पीते हैं तो यह पारा उनके शरीर में पहुंच जाता है। झारखंड की शोक नदी के नाम से मशहूर दामोदर नदी बोकारो और राऊरकेला लौह व इस्पात संयंत्रों के बीच स्थित है विभिन्न कोयला धुलाई संयंत्र से प्रतिमाह 82,000 टन कोयला साफ किया जाता है और इस सफाई के दौरान 1800 टन कोयला इस नदी में बह जाता है। एक अध्ययन के अनुसार इस नदी में अवशिष्ट ठोस पदार्थों की मात्रा 1,00,000 मिली ग्राम प्रति लीटर पाई गई है। जबकि जल की अधिकतम सहनीय क्षमता 100 मिली ग्राम प्रति लीटर मानी जाती है। इतना ही सिंदरी खाद कारखाने से 10 से 15 टन सल्फेरिक एसिड दुर्गापुर केमिकल्स से 25 से 10 टन दूषित पदार्थ आकर मिलता हैं। एक और अध्ययन के अनुसार दुर्गापुर के निकट 08 औद्योगिक ईकाइयां हैं। जो लगभग 1.59 लाख घनमीटर अवशिष्ट पदार्थ दामोदर नदी में प्रतिदिन डालती हैं।[1]

बिहार में सोन नदी की स्थिति और भी खराब है वहां मिर्जापुर के समीप स्थित कागज और रसायन उद्योग की इकाइयों से उत्पन्न खतरनाक अवशिष्ट इतना अधिक है, जिसके कारण क्लोरीन अंश रिहंद जलाशय के समीप 62 पी.एम.पी. हो गया है, जबकि इसकी घुलनशील ऑक्सीजन का स्तर नदी में गिरकर 0.2-1-2 किग्रा प्रति लीटर न्यूनतम आ जाता है। जिससे जल जीवाणुओं का अस्तित्व खतरे में आ जाता है। पश्चिमी बंगाल की हुगली नदी उर्जा संयंत्रों के गर्म पानी तथा अन्य उपयुक्त औद्योगिक अवशिष्टों के कारण इतनी प्रदूषित हो चुकी है कि नदी की मछलियों और उनके अंडों तक का विनाश होना प्रारंभ हो चुका है। इस नदी के किनारे स्थित कागज की लुगदी उद्योग से लगभग 114 लाख तरल अवशिष्ट नदी में जाकर समाहित हो रहा है इसके अतिरिक्त कलकत्ता महानगर का समस्त मलमूत्र भी इस नदी में आकर मिलता है।

तमिलनाडु की कावेरी नदी भी प्रदूषित होने से नहीं बची है। क्योंकि यह भारत हैवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड द्वारा छोड़े गये रसायन से प्रभावित हो रही है। केरल की चालियार नदी का जल अवशिष्ट पदार्थों के कारण भूरा पड़ गया है। वैज्ञानिकों का मानना है कि इस नदी के समीप स्थित रेयन फैक्ट्री द्वारा फेंके गए उच्चस्तरीय पारे के कारण नदी की मछलियों तक के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया है। इसी प्रकार का पारा विष (मरकरी) उड़ीसा की रसकुल्या तथा महाराष्ट्र की थाने क्रीक नदी में भी पर्याप्त मात्रा में पाए जाने के प्रमाण मिले हैं। दूषित

[1] CENTRAL POLLUTION CONTROL BOARD. (2015). *Water Quality of Rivers at Interstate Borders 20-32*

पदार्थों के अलावा कई उच्च तापमानीय जल नदियों में डालते हैं जिससे जल के निचले भाग में रहने वाले जीवजंतुओं का अस्तित्व संकट में पड़ जाता है, ऐसा माना जाता है कि जल में पाए जाने वाले जीवाणुओं के लिए 25% से 30% तापमान अनुकूल नहीं होता और 30% से 35% का तापमान जैविक मरुस्थल माना जाता है जिसमें यह वहां जीवित नहीं रह सकते। (इंडिया वाटर पोर्टल: नदियों के जीवन पर प्रभाव)

इस प्रदूषण की सर्वाधिक मात्रा देश के पवित्र माने जाने वाले नगर बनारस में पाई जाती हैं जहां गंगा के किनारे शव जलाए जाते हैं और जल धारा को समर्पित किए जाते हैं। कुछ समय पूर्व तक जनमानस की यह धारणा थी कि गंगाजल कभी खराब नहीं होता है और ना ही इससे छूत रोग होने का खतरा रहता है। पर शव पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार अब पवित्र गंगा स्नान के उपयुक्त नहीं रह गई हैं क्योंकि इसमें नहाने से चर्मरोग होने की सम्भावनाएं हैं और इसका प्रमाण है गंगा शुद्धि अभियान क्योंकि इस शब्द के चेतना में आते ही गंगा जल के प्रदूषित होने तथा सम्भाव्य खतरों की कहानी स्पष्ट होती है। (सत्येंद्र सिंह: गंगा)

चंबल का पानी भी धीरे–धीरे कई स्थानों पर उपयुक्त नहीं रहा इसके पानी से भूगर्भीय जल के विषाक्त होने का खतरा पैदा हो गया है। इसका कारण चंबल के किनारे बसा औद्योगिक शहर कोटा जो अपना पूरा योगदान इसे प्रदूषित करने में दे रहा है। उज्जैन के समीप शिप्रा नदी की भी लगभग यही स्थित है। जल प्रदूषण की यह समस्या राष्ट्रीय समस्या है। लेकिन सरकार तब तक कुछ कर सकने में समर्थ नहीं हो सकती जब तक सामान्य जन में जन जागृति न हो। भारत सरकार 1981-90 ने पेयजल और सेनिटेशन अंतरराष्ट्रीय घोषणा पत्र पर दस्तखत कर सराहनीय कार्य किया जिसका मुख्य उद्देश्य विश्व के तमाम लोगों को स्वच्छ और सुरक्षित जल एवं सेनिटेशन प्रदान करना है। लेकिन घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर करने से दायित्व की इतिश्री नहीं हो जाती इसके लिए भारत सरकार और हम सबको मिलकर देश के पानी के स्रोतों को स्वच्छ और शुद्ध रखना होगा इस दिशा में सामाजिक चेतना जागृत करने का सरकार व प्रबुद्ध लोगों के द्वारा प्रयास होने चाहिए। अंत में समाज से यही अपील है कि पानी की बर्बादी करने से खुद को तथा अपने से संबंधित लोगों को बचाएं, तथा समाज के हर व्यक्ति को यह बताने का प्रयास करें कि पानी को लहू की तरह सुरक्षित रखिए क्योंकि दोनों के बिना जीवन की कल्पना नहीं है।(सत्येंद्र सिंह: गंगा)

भारत सरकार ने करोड़ों रुपये जल और नदी के संरक्षण पर खर्च कर दिए हैं लेकिन नतीजा ढाक के तीन पात ही है। नदियां साफ व स्वच्छ होने की जगह और मैली होती गई है। आखिर नदियों को बचाने की रणनीति में कहां चूक होती रही है? क्यों हम अपनी नदियों को मैला होने से नहीं बचा पा रहे हैं? क्या किया जाए कि नदियों का

जीवन बच जाए? क्या उपाय करें कि नदियां नाला न बनें? इन सब सवालों पर मंथन जरूरी है। समाज का जन जागरण जरूरी है। प्रत्येक मनुष्य को यह याद दिलाने की जरूरत है कि नदी नहीं बचेगी तो हम भी कहां बचेंगे? नदी के जल की कल-कल है तो कल है और जीवन है। नदियों में मल-मूत्र (सिवेज), औद्योगिक कचरा छोड़ना सरकार को तत्काल प्रतिबंधित करना चाहिए। नदियों के संरक्षण के अभियान में अब तक समाज की भागीदारी कभी सुनिश्चित नहीं की गई। जबकि समाज को उसकी जिम्मेदारी का आभास कराए बगैर नदियों का संरक्षण और शुद्धिकरण संभव नहीं है। यह आंदोलन है, भले ही सरकारी कई योजनाए लाये वह सफल नहीं होंगी। हम जानते हैं कि समाज की सक्रिय भागीदारी के बिना कोई भी आंदोलन अपने लक्ष्य को नहीं पा सकता। इसलिए सरकार, प्रबुद्ध समाज को प्रयास करना चाहिए की वह नदियों को समाज से जोड़े। ताकि नदी संरक्षण की दिशा में एक बड़ी मुहिम की शुरुआत हो सके।

प्रख्यात पर्यावरणविद् महंत वीरभद्र मिश्र के शब्दों में इन नदियों के तट पर हर साल होने वाले वरुणा महोत्सव, तमसा महोत्सव, गोमती महोत्सव जैसे खर्चीले आयोजन कर सरकार अपने कर्तव्य को पूरा मान लेती है पर जब तक इन नदियों को बचाने के लिए कारगर मुहिम को जन आंदोलन का रूप नहीं दिया जाएगा तब तक नदियों को विनाश से बचाना संभव नहीं।